JETIR.ORG ISSN: 2349-5162 | ESTD Year : 2014 | Monthly Issue
JOURNAL OF EMERGING TECHNOLOGIES AND INNOVATIVE RESEARCH (JETIR)
An International Scholarly Open Access, Peer-reviewed, Refereed Journal

बिहार के अति पिछड़ा जाति में राजनीतिक चेतना का विकास

डॉ. अजय कुमार
शोधछात्र, इतिहास विभाग, जयप्रकाश विश्वविद्यालय
छपरा, सारण, बिहार, 841301

सारांश

अति पिछड़े शब्द आधुनिक राजनीतिक अवधारणा है। इस शब्द का प्रयोग 1910 ई. में स्वामी अच्यूतानंद ने किया था। इसका उपयोग 60 के दशक में हरिजनों के लिए ज्यादतर किया जा रहा था। सर्वप्रथम गॉधी जी द्वारा समाज के सबसे शोषित, अति पीड़ित लोगों के लिए 'अति पिछड़े' शब्द का प्रयोग सामाजिक स्तर पर किया गया था। 20 वीं सदी के शुरूआत से लेकर 1837 ई. तक अति पिछड़ों के उत्थान के लिए किए गए सरकारी और गैर–सरकारी प्रयासों चर्चा किए गए। इसमें महात्मा गॉधी द्वारा बिहार के चम्पारण आन्दोलन में अति पिछड़े की हालत सुधारने के लिए उसपर कई बड़े–बड़े कार्यक्रम किए गए। बिहार के अनेक नेताओं द्वारा बिहार में अति पिछड़ों के लिए किए गए प्रयासों में सबसे पहला स्थान डॉ0 राजेन्द्र प्रसाद का है। जिन्होनें गॉधी जी के साथ अनेक रचनात्मक काय में भाग लेकर अति पिछड़ों की दयनीय स्थिति सुधारने का प्रयास किया।

निष्कर्ष

बिहार में अति पिछड़ा वर्ग (ई बी सी) में राजनीतिक चेतना का विकास कर्पूरी ठाकुर की नीतियों और 2005 के बाद नीतिश कुमार के सशक्तिकरण प्रयासों के कारण हुआ। 1970 के दशक के बाद से (ई बी सी) जो राज्य की आबादी का 36 प्रतिशत है, अब एक स्वतंत्र राजनीतिक वोट बैंक बनकर उभरा है। पंचायत और नगर निकाय चुनावों में आरक्षण के माध्यम से वे अब निर्णायक भूमिका निभा रहें हैं।

भूमिका

20 वीं सदी के प्रारंभ में कई मानवीय एवं विवेकशील परंपराऍ कायम हुई। जिससे अति पिछड़ों के कल्याण का कार्य स्वतंत्र रूप से हो सका। कई समाजिक और राजनीतिक नेताओं ने दलितों के सामाजिक समस्याओं के निवारण के लिए अनवरत प्रयास किए। 1900 ई. में राष्ट्रीय सामाजिक सभा एवं 1902 के अहमदाबाद कांग्रेस सत्र ने अति पिछड़ी जातियों के भौतिक और नैतिकोन्नति, सामाजिक शिक्षोत्थान परा प्रकाश डाला। इन सबों का परिणाम यह हुआ कि बिहार राज्य के अति पिछड़े में सुधार आन्दोलन की शुरूआत हुई।

1917 ई. में अति पिछड़ें जातियों के उत्थान के एक महत्वपूर्ण पुरोधा के रूप में महात्मा गॉधी का चम्पारण की धरती पर आर्विभाव हुआ। चम्पारण का किसान आन्दोलन भारतीय स्वतंत्रता

के इतिहास में अद्वितीय महत्व रखता है। यही से गॉधी जी ने आर्थिक असमानता को समाप्त करने और समाज के शुद्धिकरण के लिए कार्य करना शुरू किया। गॉधी जी के चम्पारण आगमन ने अति पिछड़ों को जागृत किया। इन्होनें अति पिछड़ी जातियों से कहा कि इन्हें अपना रास्ता खुद बनाना चाहिए जैसा रास्ता उच्च जाति के लागों ने बनाया है।

26 जनवरी 1950 को देश में नया संविधान लागू हुआ। इसमें अति पिछड़ों के हितों की सुरक्षा के लिए कई अधिनियम बनाए गए। भारतीय संविधान कें तृतीय खंड में सभी नागरिकों के लिए समानता का अधिकार दिया गया। संविधान की धारा 17 के अनुसार सभी के साथ समान व्यवहार करने को कहा गया, चाहे वह कितना भी अभाव ग्रस्त क्यों न हो। धारा 23 में शोषण के विरूद्व अधिकार प्रदान किया गया। संविधान की धारा 29 के तहत सांस्कृतिक और शैक्षणिक अधिकार दलितों एवं अति पिछड़े वर्गो के लोगों को भी मिला। धारा 330 के अनुसार अति पिछड़े वर्गो के लिए विशेष व्यवस्था की गई तथा अनुसूचित जातियों एवं अनुसूचित जनजातियों के लिए लोक सभा में स्थान आरक्षित किया गया। इसी प्रकार धारा 335 के अन्तर्गत सरकारी नौकरियों में इनके लिए आरक्षण की व्यवस्था की गई। अन्य पिछड़ा वर्ग को बिहार में दो घटक (पिछड़े1 तथा पिछड़े2) में बॉटा गया। जिनको एनेक्चर 1 में रखा गया, वही अति पिछड़े की श्रेणी में रखे गए जिन्हें निम्न शुद्र भी कहा जाता है। इन सभी सरकारी प्रयासों के परिणाम स्वरूप काफी संख्या में अति पिछड़ों ने अपनी स्थिति सुधारने में सफलता प्राप्त की।

बिहार प्राचीन समय से ही भारत का हृदयस्थली रहा है। राजनीतिक दृष्टिकोण से बिहार काफी जागरूक था। यहॉ मगध राज्य का विस्तार राजनीतिक परिपक्ता को दर्शाता है। मौर्य साम्राज्य में सम्राट अशोक की प्रशासनिक एवं राजनीतिक व्यवस्था के चलते ही उसे विश्व इतिहास में सम्मान जनक स्थान प्राप्त है। 1933 ई. में बिहार के शाहाबाद जिले के करगहर में सरदार जगदेव सिंह के नेतृत्व में त्रिवेणी संघ की स्थापना हुई। इसमें यादव, कुर्मी, कोईरी सम्मिलित थे। देखते–देखते इस संगठन ने पूरे बिहार में अपना वर्चस्व कायम कर लिया। 1937 ई. के विधान सभा चुनाव में त्रिवेणी संघ के सदस्य चुनाव में उतरे किन्तु जीत हासिल नही कर सकें। गॉधी जी ने भी अपने राजनीतिक जीवन का प्रारंभ बिहार से ही किया था। 1942 के भारत छोड़ो आन्दोलन में भी बिहार की भूमिका अहम रही थी। चूकिं स्वतंत्रता से पहले स्वतंत्रता संग्राम के हर काल में बिहार सक्रिय रहा था।

बिहार की राजनीतिक में तीसरा चरण सन् 1972 से 89 तक का काल कहा जा सकता है। इस काल की राजनीतिक की सबसे बड़ी विशेषता प्रदेश की राजनीतिक में ब्राहम्ण जाति की मजबूत स्थिति तथा प्रदेश में अगड़ी और सबसे पिछड़ी जातियों का बढ़ा हुआ धुवीकरण है। इसी काल मं 1974–75 में मौलिक परिवर्तन के लिए जय प्रकाश नारायण के नेतृत्व में छात्र आन्दोलन हुआ, जिसने राज्य के हर क्षेत्र के ढ़ाचे को जड़ से हिला दिया। लेकिन इससे पहले कि जय प्रकाश नारायण के द्वारा कोई विकल्प प्रस्तुत किया जाता, देश में आपात काल लागू कर दिया गया। आपात काल की घोषणा ने सभी विराधी दलों को एक मंच पर आने का अवसर प्रदान किया और जनता दल का निर्माण हुआ। बिहार में

भी 1977 में जनता दल की सरकार अस्तित्व में आयी और कर्पूरी ठाकुर मुख्यमंत्री बनें। 1977 में कर्पूरी सरकार ने मुंगेरी लाल आयोग की रिपोर्ट का स्वीकार कर लिया। जिससे पहली बार राज्य में अगड़े–पिछड़े की जंग शुरू हुई। 1979 में पुनः इंदिरा गॉधी की सरकार अस्तित्व में आई। वस्तुतः बिहार के प्रथम दौर की राजनीति में अति पिछड़ी जातियॉ लोकतांत्रिक प्रणाली में अपने पहचान के लिए संघर्ष कर रही थी। 1967 से 72 तक विराधी दलों की गठजोड़ में बनी सरकारें राजनीतिक दल–बदल, संयुक्त सरकार, राष्ट्रपति शासन, मध्यावधि चुनाव तथा कांग्रेस के नेतृत्व में बनी सरकार का काल है। दूसरे चरण की राजनीति में बिहार प्रदेश में राजनीतिक अस्थिरता, दल–बदल साझा सरकारों की भरमार तथा राज्यों की राजनीति में पिछड़ी जातियों का तेजी से प्रवेश हुआ।

बिहार की राजनीति का चौथा दौर 1990 से वर्तमान तक कहा जा सकता है। जब बिहार के राजनीतिक प्रवेश में व्यापक परिवर्तन हुआ तथा सामाजिक न्याय राजनीतिक ऐजेन्डों पर आया और श्री लालू प्रसाद यादव बिहार के मुख्यमंत्री बने। इस दौर की राजनीति का सबसे अच्छा परिणाम यह हुआ कि दबी कुचली जातियों में अधिकार चेतना जागृति और उनमें राजनीतिक और सामाजिक अधिकार के प्रति जागरूकता आई। वे सत्ता में अपनी भागीदारी के प्रति भी जागरूक हुए व देखते ही देखते बिहार की राजनीति, राजनीतिक लोकतंत्र से सामाजिक लोकतंत्र में बदल गई तथा सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक, सांस्कृतिक, और शैक्षणिक सभी क्षेत्रों में सभी समूहों की बराबर भागीदारी के पक्ष में आवाज उठने लगी। राबड़ी देवी के रूप में पहली महिला

मुख्यमंत्री भी बिहार को इसी काल में मिला। लेकिन इस काल का सबसे बुरा परिणाम यह रहा कि बिहार का समाज लगभग निर्णायक रूप से जातियों के आधार पर विखंडित हो गया और एकता की अन्तरध्वनी खत्म हो गई। मोटे तौर पर यहाँ का समाज पाँच भागों में विभाजित हो गया–अगड़ा, पिछड़ा, अति पिछड़ा, हरिजन और मुसलमान। इस विभाजन को और मजबूत बनाया 1990 में लागू हुए मंडल आयोग की सिफारिशों ने। इस सिफारिशों को लागू करने के विरोध में सवर्णो के द्वारा इतना तीव्र विरोध चलाया गया कि प्रतिक्रिया स्वरूप अति पिछड़ा जातियों ने भी अपना एजेंडा और वोट देने का आधार ही बदल दिया। हालांकि जातीय आधार पर पहले भी वोट दिए जाते थे, पर 1990 के बाद तो मंडल समर्थन बनाम मंडल विरोध के मुद्दे इस तरह हावी हो गए कि शेष महत्वपूर्ण मुद्दे जैसे आर्थिक मुद्दे, शेष विकास के मुद्दे आदि पीछे छूट गए। लालू प्रसाद यादव के सत्ता में आने के बाद बिहार की राजनीति में अपराधिकरण की प्रवृति को भी बढ़ावा मिला। ऐसा मंडल विरोधी सवर्ण बाहुबलियों के नाम पर हुआ तथा लालू विरोधी दलों ने भी लालू के नाम पर खोज–खोज कर बाहुबलियों को राजनीति में आगे बढ़ाया। यानि जातिवाद, अपराध, धार्मिक कट्टरता का बोलबाला बढ़ गया तथा जनता के विकास से जुड़े मुद्दे राजनीति से गायब होने लगे। लालू यादव पर केवल पिछड़ी जाति का समर्थन तथा अति पिछड़ी जातियों को नजरअंदाज करने का आरोप लगाए गए। राज्य में यादव जाति का वर्चस्व बढ़ गया। अति पिछड़ी जाति के अलावे पिछड़ी जाति में भी यादव जाति को छोड़कर कुर्मी,

कुशवाहा, बनिया आदि को राजनीति के क्षेत्र में पीछे धकेल दिया गया। राजनीति के क्षेत्र में उनको नजरअंदाज किया जाने लगा।

जब नवंबर 2005 में वत्तमान मुख्यमंत्री नीतिश कुमार विकास के मुद्दे पर सत्ता में आये तो उनके दावे के सामने भी प्रश्नचिन्ह लग गया। नीतिश दो प्रतिज्ञाओं के आधार पर सत्ता में आए। एक ओर समाज नई उम्मीद के साथ आया। एक ओर समाज के कुलीन वर्ग को उनके अधिकार की बहाली के लिए और दूसरी ओर शोषित तबके की विकास में भागीदारी के लिए ताकि बिहार के ढ़ाचे को नई बुनियाद पर खड़ा किया जा सके। वर्त्तमान सरकार ने नागरिकों की सुरक्षा, विकास और न्याय दिलाने को अपनी पहली प्राथमिकता बताया। महिलाओं, दलितों और पिछड़े वर्ग के सशक्तिकरण तथा आधारभूत संरचना का विकास अर्थात् न्याय के साथ विकास की प्राथमिकता तय की। पिछले कुछ सालों के अन्दर बिहार में महत्वपूर्ण परिवर्तन भी दिखने लगे है। विशेषकर महिला सशक्तिकरण के क्षेत्र में, जिसमें त्रिस्तरीय पंचायती राज व्यवस्थाओं में प्रत्येक स्तर पर महिलाओं को 50 प्रतिशत आरक्षण दिया गया। शिक्षा, स्वास्थ्य जैसे आवश्यक बुनियादी सुविधाओं का स्तर सुधार कर आर्थिक क्षेत्र में पूंजी निवेश करवाने की कोशिश आदि ऐसे प्रयास हैं, जिसने बिहार की राजनीतिक मुद्दे को बदल कर रख दिया।

बिहार की राजनीति की पहली विशेषता उसका जाति पर आधारित होना है। राजनीति दल नीति अथवा कार्यक्रम के बदले जातीय अभिमुख ज्यादा है। राज्य की राजनीति की एक प्रमुख विशेषता यहॉ परंपरागता को बनाये रखने के साथ आधुनिकता

के प्रति भी आग्रह साफ दिखाई देता है। निर्वाचन क्षेत्र जितना छोटा होगा, परंपरावादी तत्व उतने ही प्रभावी होगें। बिहार प्रदेश में सामन्तवादी एवं प्रतिक्रियावादी ताकतें प्रारंभ से ही मजबूत रही हैं। कांग्रेस के अधिकांश लोग ने बड़े जमींदार और भू–स्वामी रहे हैं। राज्य में सभी दलों के नेता बड़े भू–स्वामी रहें हैं और इन भू–स्वामियों ने स्थानीय स्तर पर अपनी सेनाए भी गठित किए जिनके द्वारा राज्य में, जिले में अनेक हिंसक व शर्मनाक घटनाओं को अंजाम दिया गया। सामान्तवादी प्रवृति ने ही राज्य को औद्योगिक दृष्टि से पिछड़ा बनाए रखा है, इसमें अशान्ति, भ्रष्टाचार, भाई–भतिजावाद तथा रूढ़वादी विचारधाराओं की प्रबलता रही है। इसके साथ ही यहॉ चेतना आर्थिक हितों व राजनीति अधिकारों के प्रति भी जागरूक हुई है। बिहार की राजनीति में जाति हमेशा निर्णायक कारक रहा है। आजादी के बाद के शुरूआती दौर मे जब अति पिछड़ी जातियॉ जनतंत्र में अपनी पहचान के लिए संघर्ष कर रहीं थी, शीर्ष पर सत्ता संघर्ष में अगड़ी जातियॉ ही दिख रही थी प्रथम चरण में यह संघर्ष भूमिहारों और राजपूतों के बीच तथा दूसरें चरण में ब्राहम्णों और कायस्थों के बीच था। 1967 में हुए आम चुनाव को बिहार व कई अन्य राज्यों में पहली बार कांग्रेस के पराजित होने के लिए ही याद किया जाता है। लेकिन बिहार में चुनाव सर्वणवाद के आंशिक रूप से पराजित होने तथा समाजवादी नेता स्वर्गीय कर्पूरी ठाकुर के नेतृत्व में अति पिछड़ी जातियों की पहचान स्थापित होने की दृष्टि से भी महत्वपूर्ण है, इसके बाद अगर 80 का दशक छोड़ दिया जाए तो लालू यादव, राबड़ी देवी, नीतिश कुमार सभी पिछड़ी जाति से संबंधित नेता ही मुख्यमंत्री बने न केवल मुख्यमंत्री

बल्कि बड़ी संख्या में पिछड़ी जाति के सदस्यों ने मंत्री पद भी धारण किये। इसलिए कहा जा सकता है कि शुरू में जहाँ राजनीति अगड़ी जातियों के बीच ही संचालित होती थी वहाँ अब पिछड़ी एवं अति पिछड़ी जातियों की भागीदारी बढ़ रही है। और राजनीति तथा राजनीतिक पद अति पिछड़ी जातियों के इर्द–गिर्द घूम रही है। आज राजनीतिक नेतृत्व का स्वरूप बदल गया है। इसके अलावा एक नई प्रवृति महिला की राजनीतिक भूमिका के रूप मे भी पनपी है। जब मुख्यमंत्री के रूप में राबड़ी देवी ने शपथ ली। 1990 के विधानसभा चुनावों के बाद पहली बार ऐसा हुआ, जब बिहार विधानसभा में ऊँची जातियों की तुलना में पिछड़ी एवं अति पिछड़ी जातियों के विधायक अधिक संख्या में चुनकर आए। अति पिछड़ी जातियों में नई पीढ़ी के नेताओं का उभार हुआ। लेकिन अब भी बिहार की राजनीति में ऊँची जातियाँ और अति पिछड़ी जातियों का ध्रुवीकरण नहीं हुआ था। आम तौर पर अति पिछड़ी जातियाँ गैर कांग्रेसी और समाजवादी विचारधारा के दलों के साथ जुड़ी थीं लेकिन 1990 के विधानसभा चुनावों तक खुले रूप से अति पिछड़ी जाति की अस्मिता की राजनीति शुरू नहीं हुई थी। 1990 के दशक में इस तरह के राजनीति का उभार हुआ। इसमें दो तरह के कारकों ने महत्वपूर्ण भूमिका निभाई पहला, मंडलवादी राजनीति और दूसरा लालू प्रसाद यादव का नेतृत्व। मंडलवादी राजनीति से तात्पर्य 1990 में मंडल आयोग की सिफारिशों को लागू किए जाने के बाद पिछड़ी जातियों के साथ–साथ अति पिछड़ी जातियों की राजनीतिक चेतना, सक्रियता और अपनी पहचान की भावना में हुई बढ़ोतरी के कारण राजनीति का स्वरूप बदला। इसने बिहार की राजनीति को पूरी तरह बदल

दिया। मंडलवादी राजनीति ने बिहार को स्पष्ट रूप से ऊँची जातियों और पिछड़ी जातियों के खानों में बॉट दिया। लालू एक कुशल नेता की भॉति पिछड़ों एवं अति पिछड़ों की चेतना के वाहक बनें। लालू ने पिछड़ी एवं अति पिछड़ी जातियों में आत्मसम्मान की भावना जगाई और अल्पसंख्यकों को समरसतापूर्ण और सुरक्षित सामाजिक महौल दिया। इस तरह उन्होंनें अपने मजबूत समाजिक आधार का निर्माण किया। बाद के वर्षो में में लालू को पिछड़ी जाति के मजबूत नेता नीतिश कुमार से चुनौती मिली, क्योंकि बाद के वर्षो में श्री लालू प्रसाद यादव केवल अति पिछड़ा को ही नहीं बल्कि पिछड़ी जाति के यादव जाति को छोड़कर अन्य सभी जातियों की उपेक्षा करने लगें। वास्तव में 1990 के दशक में अति पिछड़ों की राजनीतिक चेतना, प्रतिनिधित्व की चाह और आत्मसम्मान की भावना में बहुत वृद्वि हुई। शुरू में तो अति पिछड़े, लालू के समर्थन में खड़े हुए, क्योंकि ऐसा माना जाता है कि अति पिछड़ों को अगड़ों के खिलाफ बोलने की जुबान लालू प्रसाद के द्वारा ही दी हुई थी। लेकिन बाद के वर्षो में लालू प्रसाद के द्वारा ही अति पिछड़ो की उपेक्षा किया जाने लगा। अति पिछड़ों ने लालू का विरोध किया तथा नीतिश के पक्ष में गोलबंद होने लगें।

लालू प्रसाद यादव ने 10 मार्च 1990 को पटना के ऐतिहासिक गॉधी मैदान में बिहार के मुख्यमंत्री के रूप में शपथ ग्रहण की। उनकी सरकार को भाकपा, माकपा और कई छोटे दलों ने अपना समर्थन दिया। लालू के मंत्रिपरिषद् में पिछड़ी जातियों का वर्चस्व था। इसमें 30.49 फीसदी सदस्य पिछड़ी जातियों के थे, 17 फीसदी अति पिछड़ी जबकि 20 फीसदी ऊँची

JETIR

जातियों, 13 फीसदी अनुसूचित जातियों, 1.3 फीसदी अनुसूचित जनजातियों और 9.21 फीसदी सदस्य मुस्लिम समुदाय के थे। मुख्यमंत्री बनने के बाद उनकी भूमिका निर्धारित होने की प्रक्रिया शुरू हुई। अब एक ऐसा नेता मुख्यमंत्री बना, जो न सिर्फ पिछड़ी जाति का था, बल्कि अति पिछड़ी जाति के लागों को अगड़ों के प्रति जागरूक करने के प्रयास कर रहा था तथा अति पिछड़ों जो वर्षों से दबे थे उन्हें अगड़ों के विरूद्ध खड़ा हाने की ताकत दे रहा था।

मंडल आयोग अति पिछड़ें वर्गो की पहचान और उनके लिए आरक्षण संभावनाओं को तलाशनें के लिए गठित दूसरा आयोग था। मंडल आयोग की नियुक्ति जनवरी 1979 में जनता पार्टी की सरकार द्वारा की गई थी। इस आयोग के अध्यक्ष बिंध्येश्वरी प्रसाद मंडल थे। इनके अलावा आयोग में पॉच अन्य सदस्य थे। आयोग ने अपनी रिपोर्ट 1980 में प्रस्तुत कर दी। मंडल आयोग की कार्यविधि कालेलकर आयोग से ज्यादा अच्छी थी। इसने देश के प्रत्येक जिले के दो गॉवों और एक शहरी खंड का सर्वेक्षण किया। आयोग की रिपोर्ट में यह स्वीकार किया गया कि अन्य यानि अति पिछड़े वर्गो के संबंध में विश्लेषण के लिए 1931 और 1971 की जनगणना के ऑकड़ों का ही प्रयोग किया गया है। आयोग ने मूलतः जाति को पिछड़ेपन का आधार माना।

विकास की राजनीति से मतलब है। किसी देश या राज्य का विकास उत्पादक तबका, दस्तकार ही करता है। बुनकर कपड़ा बुनता है, बढ़ई लकड़ी का काम करता है। लोहार लोहे को

ठोक–पीटकर शक्ल देता है। कोई पत्थर तरासता है। कोई आलीशान भवन बनाता है, और ये सब अति पिछड़े तबके के लोग हैं। यानि कि देश या राज्य के विकास में अति पिछड़ों का महत्वपूर्ण योगदान है।

संदर्भ ग्रन्थ

1. नव भारत टाइम्स, पटना संस्करण 10 मार्च 1990, पृ.।
2. सामयिक वार्ता, जून, 2005, पृ. 14

3 श्रीकान्त, बिहार में चुनाव जाति, हिंसा और बुथ लूट, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली 2005, पृ. 48

4. रोमा मिश्रा, कास्ट पोलराइजेशन एंड पॉलिटिक्स, सिंडीकेट पब्लिकेशन, पटना, 1994, पृ. 139
5. पी. सी. चटर्जी, रिजर्वेशन थ्योरी एंड प्रैक्टिस संकलित टी. वी. सत्यमूर्ति, रीजन, रिलीजन, कास्ट, जेंडर एंड कल्चर इन कंटेम्परररी इंडिया, आक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, 1996, पृ. 293–313,